HINDUSTAN, Delhi, 23.4.2018
Page No. 8, Size:(24.79)cms X (16.91)cms.

आधार मतलब निगरानी का आधार नहीं

इसे सरकार की निगरानी के सशक्त औजार के रूप में पेश किया जा रहा है, जबकि हकीकत में आधार जनता को सशक्त अधिकार संपन्न बना रहा है।

अजय भूषण पाण्डेय
सीईओ, यूआईडीएआई

न्यूयॉर्क टाइम्स में आठ अप्रैल को प्रकाशित रिपोर्ट 'इंडियाज बिग ब्रदर प्रोग्राम' यह धारणा बनाने की कोशिश है कि जैसे भारत आधार के रास्ते एक 'ऑरवेलियन राज्य' में तब्दील हो रहा हो। सच तो यह है कि दुनिया का सबसे बड़ा बायोमीट्रिक प्रौद्योगिकी वाला यह मंच (आधार) 1.2 अरब लोगों को अपनी पहचान ऑनलाइन बनाने की क्षमता देने के साथ ही, उन्हें वांछित हिस्सेदारी हासिल करने और अपने अधिकारों का इस्तेमाल करने में सक्षम बनाने का जरिया है। यह बिचौलिया तंत्र और फर्जी आंकड़ों की बाजीगरी करने वालों के खात्मे के साथ ही प्रशासनिक और वितरण प्रणाली में पारदर्शिता लाने में कामयाब रहा और बीते तीन साल में 13 अरब डॉलर का सार्वजनिक धन बचाने में मददगार साबित हुआ है। कर चोरी, मनी लांडरिंग और आतंकवाद का वित्त पोषण करने वाली टेरर फंडिंग पर रोक का कारगर जरिया बनने के साथ ही इसने देश में भरोसे का वित्तीय माहौल बनाने में भी मदद की है।

चित्रांकन : डी. श्रीनिवास

आधार जिस तरह गरीबों के लिए गेम चेंजर बनकर उभरा, इसे निहित स्वार्थी लोगों के निशाने पर आना ही था, क्योंकि इसने लंबे समय से चली आ रही सिस्टम की खामियों, उसके उन छेदों को बंद किया, जहां से वे गरीबों के हक पर सेंध लगाकर मालामाल हो रहे थे। इसमें कोई शक नहीं कि आधार ने सरकार की जनता तक पहुंच आसान कर दी है। दुर्भाग्यवश, इसे सरकार की निगरानी के एक सशक्त औजार के रूप में देखा जा रहा है, जबकि हकीकत में आधार जनता को सशक्त अधिकार संपन्न बना रहा है, न कि सरकार को।

विश्व के कई विकसित लोकतांत्रिक देशों में यूनीक आइडेंटिफिकेशन नंबर का इस्तेमाल हुआ है। अमेरिका ने लोगों को सामाजिक सुरक्षा दायरे में लाने के लिए 1935 में ही सोशल सिक्यूरिटी नंबर (एसएसएन) की शुरुआत की, जिसके दायरे को और व्यापक बनाते हुए राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने इसे 1942 में सभी संघीय एजेंसियों के लिए अनिवार्य कर दिया। 1962 में इसे आधिकारिक तौर पर टैक्स आइडेंटिफिकेशन (आधिकारिक कर पहचान संख्या) के लिए अपनाया गया। बाद में सामाजिक सुरक्षा और अन्य कानूनों में संशोधन करके इसे कर प्रशासन, सार्वजनिक सहायता, खाद्य, छात्रवृत्ति, लाइसेंस या वाहन पंजीकरण जैसी सुविधाओं के लिए भी उपयोगी बना दिया गया। अदालतों ने भी एसएसएन के इस्तेमाल को सांविधानिक माना। इसे बैंक खातों, जन्म-मृत्यु पंजीकरण के लिए अनिवार्य कर दिया गया।

ब्रिटेन में भी वर्क परमिट, बैंक खातों, कर भुगतान, बच्चों को मिलने वाले लाभ और मताधिकार जैसी सुविधाओं के लिए नेशनल इंश्योरेंस नंबर (एनआईएन) का होना जरूरी है। आलोचकों का कहना है कि एसएसएन और एनआईएन बायोमीट्रिक्स पर आधारित नहीं हैं। क्या वे बायोमीट्रिक्स डेटा संग्रहण या केंद्रीकृत संख्या प्रणाली का विरोध कर रहे हैं, जैसा कि उनका दावा है कि यह संभावित रूप से सारे डाटाबेस को या दोनों को लिंक कर सकता है।

पश्चिम में भी वैध उद्देश्यों के लिए बायोमीट्रिक्स कानून सम्मत और स्थापित परंपरा है। तो क्या एसएसएन को अनिवार्य कर देने से, जो सरकार को नागरिकों की ट्रैकिंग का अधिकार देता है, अमेरिका एक निगरानी आधारित राज्यसत्ता में तब्दील हो गया? अमेरिका और ब्रिटेन जब एसएसएन या एनआईएन का इस्तेमाल करते हैं, तो वे ऑरवेलियन राज्य नहीं माने जाते, लेकिन भारत यही काम करता है, तो हाय-तौबा मच जाती है। कहा जाता है कि 'बिग ब्रदर' नजर रख रहा है। ऐसे में *न्यूयॉर्क टाइम्स* का भारत को निगरानी आधारित राज्य होने का आरोप लगाना कहां तक उचित है?

कुछ लोग तर्क देंगे कि अमेरिका या ब्रिटेन में सुरक्षा के ऐसे मानक हैं, जो आशंकाएं नकारते हैं। तो भारत में भी ऐसी मजबूत विधायिका, न्यायपालिका और स्वतंत्र मीडिया है, जो कार्यपालिका द्वारा इसके किसी भी तरह के दुरुपयोग पर लगाम लगाने की क्षमता रखते हैं। हमें लोकतंत्र के इन स्तंभों पर भरोसा करना चाहिए। आधार ऐक्ट 2016 राज्यसत्ता द्वारा ऐसी किसी भी निगरानी की संभावनाओं को खारिज करता है। यह गोपनीयता के स्वाभाविक सिद्धांत पर आधारित है- जिसका आशय ही यह है कि कोई भी, चाहे वह कोई निजी संस्था हो, यूआईडीएआई हो या सरकार हो, किसी की निजी जानकारियां साझा नहीं कर सकता। पंजीकरण प्रक्रिया में यूआईडीएआई सिर्फ न्यूनतम डाटा यानी नाम, पता, जन्मतिथि, लिंग और बायोमीट्रिक दर्ज करता है, न कि पारिवारिक ब्योरा। इसमें न तो संपर्कों की सूची ली जाती है, न ही व्यक्ति की पसंद-नापसंद, जो सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के लिए आम बात है। *न्यूयॉर्क टाइम्स* को अमेरिका के जन्म पंजीकरण फॉर्म और इसके लिए मांगी जाने वाली तमाम व्यक्तिगत जानकारियों की भी समीक्षा करनी चाहिए, जिन्हें साझा करना माता-पिता के लिए अनिवार्य है।

न्यूयार्क टाइम्स की रिपोर्ट 210 सरकारी वेबसाइट से डाटा लीक की बात करती है। लेकिन वे देखने में चूक गए कि यह सारा डाटा कुछ सार्वजनिक रिकॉर्ड से लिया गया था, जिसमें सरकारी सहायता प्राप्त करने वाले लाभार्थियों का नाम, पता, बैंक खाता संख्या, आधार संख्या जैसे विवरण शामिल थे। इसके प्रकाशन के पीछे पारदर्शिता थी, न कि डाटा लीक जैसी बात। सवाल है कि कोई व्यक्ति सार्वजनिक निधियों से सहायता लेता है, तो उसे अपना ब्योरा क्यों नहीं देना चाहिए?

यह भी कि किसी भी रूप में नाम, पता, उम्र आदि गोपनीय कैसे हो सकते हैं? ऐसी तमाम जानकारियां तो मतदाता सूची, टेलीफोन निर्देशिका और यहां तक कि विकीपीडिया तक पर उपलब्ध रहती हैं। जहां तक आधार संख्या का मामला है, तो यह गोपनीय नहीं है। लेकिन, अमेरिका के एसएसएन के विपरीत आधार नंबर प्रमाणित करने के लिए बायोमीट्रिक्स जरूरी है, यानी सिर्फ आधार संख्या जान लेने से किसी की पहचान चोरी नहीं हो सकती। आलोचना करने वालों को इसकी तुलना अमेरिकी काउंटियों की वेबसाइट पर उपलब्ध सार्वजनिक जानकारियों से भी करनी चाहिए। उदाहरण के लिए मिनेसोटा की हेनेपिन काउंटी की वेबसाइट पर हर गृहस्वामी का नाम, पता, घर का मूल्य, कर, पिछली खरीद-बिक्री का सारा ब्योरा मौजूद रहता है। तो क्या यह माना जाए कि अमेरिकी काउंटियां अपनी वेबसाइट पर हर गृहस्वामी का व्यक्तिगत डाटा लीक कर रही हैं? वहां तो कई वेबसाइट ऐसी हैं, जो बहुत थोड़े से खर्चे पर अमेरिका में बसे किसी भी इंसान की बारीक से बारीक जानकारी भी उपलब्ध करा दें। आधार अपने 1.2 अरब लोगों को उनकी निजता का हनन किए बगैर उनका सशक्तीकरण करता है, और इस प्रकार यह भारत को निगरानी आधारित राज्यसत्ता में नहीं बदल सकता।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)